ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 93-96

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

ग्रामीण जीवन में किसान का बदलता स्वरूप (शिवमूर्ति का उपन्यास आखिरी छलाँग के सन्दर्भ में)

पुष्पा कुमारी

शोध अध्येत्री– हिन्दी विभाग, दक्षिण बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गया (बिहार) भारत

Received-16.01.2023, Revised-20.01.2023, Accepted-25.01.2023 E-mail: pushpa.mishra008@gmail.com

सारांश: ***स्वतंत्रापूर्व किसानों की दयनीय स्थिति दयनीय थी। इसे बेहतर बनाने के लिए कई प्रकार के प्रयास किये गए, किन्तु आज भी बहुत से किसान आर्थिक, सामाजिक आदि समस्याओं से जूझ रहें हैं। देश के अन्नदाता का यह संघर्ष किसी से छिपा हुआ नहीं है। अखबारों में हमें अमूमन किसानों की बदहाली व उनके संघर्षों की खबरें मिलती है। ऐसे में कई सवाल उभर कर सामने आते हैं जो कि किसानों की समस्याओं व उसके कारणों से सम्बन्धित हैं। आजादी के बाद भी किसान अपनी समस्याओं से आज भी जकड़ा हुआ है। बदलते समय में उसके इस जकड़न व उसके कारणों को शिवमूर्ति अपने उपन्यास 'आखिरी छलाँग' में चित्रित करते हैं।***

कुंजीभूत शब्द– किसान, जीवन, पूँजी, कर्ज, ग्रामीणजीवन, संघर्ष, सामाजिक संघर्ष, उपन्यास, अन्नदाता, सकारात्मक।

समय बदलाव का सूचक होता है। बदलते समय के साथ मानव जीवन, तकनीक आदि सभी क्षेत्रों में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन गति का सूचक होता है और यह गति जीवन का सूचक है। यह गति, यह परिवर्तन जीवन में कभी सकारात्मकता लाती है तो कभी समस्याओं के रूप में उभर कर दिखाई देने लगती है। समय के इसी बदलाव ने ग्रामीण जीवन में किसानों को भी प्रभावित किया है। किसान जीवन के इन बदलावों को कथाकार शिवमूर्ति ने अपने उपन्यास 'आखिरी छलाँग' में यथार्थ रूप में चित्रित किया है। उन्होंने बदलते समय के साथ किसानों के जीवन संघर्ष को बखूबी अपने उपन्यास में दर्शाया है।शिवमूर्ति ग्रामीण जीवन के कथाकार हैं। वे ग्रामीण जीवन, समाज, संस्कृति का यथार्थ स्वरूप को चित्रित करते हुए मुंशी प्रेमचंद की कथा परम्परा को अपनाते हैं। शिवमूर्ति के लेखन के विषय में प्रो. मैनेजर पाण्डेय लिखते हैं –"हिन्दी कथा–साहित्य में शिवमूर्ति के उपन्यासों और कहानियों से यह साबित होता है कि हिन्दी कथा–साहित्य प्रेमचंद की कथा–परम्परा को भूला नहीं है। भारत के ग्रामीण जीवन की अनेक त्रासदियों के कथाकार हैं शिवमूर्ति। एक ओर उनकी कहानियों में गाँव की स्त्रियों की अपार यातना का दर्द है, तो दूसरी ओर उपन्यासों में किसान जीवन की तबाही के कारणों और रूपों की पहचान।"

स्वतंत्रता पूर्व किसानों की दयनीय स्थिति को संभालने व सुधारने के लिए बहुत से प्रयास किये गये। इन प्रयासों के बाद भी किसान के जीवन संघर्ष में बहुत बड़ा परिवर्तन नहीं हो सका। सत्ता बदलने से शासन बदला और शोषक भी बदला लेकिन जो नहीं बदला वह है किसानों का शोषण। उस शोषण का, संघर्ष का और जीवन के साथ कदम से कदम मिलाने के लिए खींच–तान खत्म होने की जगह केवल उसका स्वरूप ही बदला। जीवन के साथ कदम से कदम मिलाने के लिए उनके संघर्ष और प्रयास बढ़ते रहे लेकिन संघर्ष अनवरत बना रहा। बेहतर भविष्य की तलाश और सुख सुविधाओं में लोगों ने गाँव से शहर का रुख किया। "पूंजीवादी बढ़ोतरी के कारण असंतुलित समृद्धि कस्बों, नगरों, महानगरों में ज्यादा दिखलाई पड़ी है। गुणीजन जैसे खिंच–खिंचकर दरबारों में पहुंचते थे, वैसे ही अब रोजी–रोटी के लिए युवक गांव छोड़ रहे हैं। छोड़कर बड़ी जगहों, सत्ता केंद्रों पर पहुंच रहे हैं। सत्ता–केंद्र, साहित्य–केंद्र भी बन रहे हैं। ऐसी स्थिति में गांव का जीवन, किसानी जीवन उपेक्षित रह जाय, तो हैरानी की बात नहीं।" इन स्थितियों के बाद गाँव बहुत सी सुविधाओं से वंचित रह जाता है। इसी स्थिति को लेखक ने इस उपन्यास के माध्यम से दर्शाया है। ग्रामीण जीवन में किसान व उसकी स्थितियों के विविध पक्षों को लेखक ने अपने इस उपन्यास 'आखिरी छलाँग' में चित्रित किया है।

'आखिरी छलाँग' सन् 2008 में 'नया ज्ञानोदय' पत्रिका के जनवरी माह के अंक में प्रकाशित हुआ था। इस उपन्यास में सीमान्त किसानों की स्थिति का वर्णन किया गया है। पहलवान एक किसान हैं, लेकिन किसान जीवन से पहले वह एक पहलवान का जीवन व्यतीत कर रहे थे। बड़ें– बड़ें पहलवानों को मिनटों में चित कर देते थे। उनके गाँव में तो क्या आस पास के बहुत से गाँव में उनके नाम की धूम थी, लेकिन आज वही पहलवान जीवन के संघर्षों में ऐसे उलझे हैं कि जिम्मेदारियाँ और उन्हें पूरा कर पाना उनके लिए कठिन होता जा रहा है। ये समस्याएँ उनके गले की फाँस बनती जा रही है। इन समस्याओं से जूझने के लिए और अपने परिवार की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पहलवान अपनी ओर से हर सम्भव प्रयास करते हैं, किन्तु जिम्मेदारियाँ हैं जो सुरसा की तरह अपना मुँह फलाए रहती हैं। इन्हीं उलझनों को सुलझाने हेतु पहलवान बैंक से कर्ज लेते हैं। यह कर्ज पहलवान के लिए अपमान का कारण बनता है। जिस पहलवान की ओर कोई आँख दिखाने की हिम्मत नहीं कर सकता था आज वही एक मामूली चपरासी द्वारा सरे राह रोका लिया गया।

"वही पहलवान जो कभी ताल ठोंककर पूरे इलाके को ललकारते थे और कोई हाथ मिलाने की हिम्मत नहीं करता था, अपने से एक हाथ छोटे मरियल से अधेड़ चपरासी द्वारा सरे बाजार राह रोक कर पकड़ लिए गए थे। पहलवान के बाएं

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

पंजे में अपना दाहिना पंजा फँसायें वह उन्हें लेकर लाले बनिया की चक्की की ओर चला। पहलवान उसके साथ ऐसे चल रहे थे, जैसे पगहें में बंधा बकरा चिकवें के पीछे –पीछे घिसटता चला आता है। मिमियाता तक नहीं। चपरासी ने रास्ते में ही बता दिया था कि बिना बेबाकी किये आज छूटना मुश्किल है," लेकिन सवाल यह उठाता है कि एक सीमान्त किसान जो समाज में इतना सम्मानित है उनकी यह स्थिति किस कारण वश हुई है? खेती–बारी के काम में खुद को खपा देने वाले किसान को अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए कर्ज लेना पड़ता है। समय तो बदला है, किन्तु समस्याएँ वही हैं। बस उसका स्वरूप बदल गया है। कर्ज तो वही है, किन्तु महाजन के स्थान पर अब बैंक है जिससे कभी खाद, कभी बीज, ट्यूबवेल, कभी बच्चों की शिक्षा के लिए और कभी बेटी की शादी के लिए किसान कर्ज लेते हैं, लेकिन ये कर्ज किसानों के लिए पहाड़ जितना बड़ा हो जाता है, जिसे वो समय पर चुका नहीं पाते हैं।

सीमित आय से किसान अपनी वर्तमान आवश्यकताओं को ही मुश्किल से पूरा कर पाते हैं, तो कर्ज कैसे चुकाए ? खेती की स्थिति के विषय में पड़ताल करते हुए शिवमूर्ति लिखते हैं –"जिसका खेती–किसानी से थोड़ा भी वास्ता है वह जुताई, बोवाई, निराई, कटाई, मड़ाई की मजदूरी और खाद–बीज, दवाई, सिंचाई की लागत जोड़कर आसानी से हिसाब लगा सकता है कि आज की तारीख (2011) में गेहूँ और धान की उत्पादन लागत बीस पच्चीस रुपए से कम नहीं आती और सरकार इनकी खरीद का समर्थन मूल्य घोषित करती है, बारह तेरह रुपए किलो, किसान कैसे जिएगा?" किसानों की दयनीय दशा को पहलवान के जीवन संघर्ष के माध्यम से शिवमूर्ति ने चित्रित किया है। उनकी मूलभूत जरूरतें जब उनकी आमदनी से पूरी नहीं हो पाती, तब वे कर्ज लेते हैं। पहलवान जिस उद्देश्य से कर्ज लेते हैं वह पूरा नहीं हो पाता और किसी अन्य कार्य में पैसा खर्च हो जाता है। किसान इसी प्रकार के संघर्षों से जूझ रहे हैं। किसान की परिस्थितियाँ आज भी कमोबेश वही है। आज भी वह अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए कर्ज लेने के लिए मजबूर है, जो बदलाव हुए हैं वह कर्ज देने वाले के स्तर पर हुआ है। किसान आज भी कर्ज समय पर न चुकाने की स्थिति में अपमानित होते हैं।

बदलते वक्त के साथ राजनीति और सत्ता के सुख को पाने के लिए और उस सत्ता के लाभ से जुड़ने के लिए गाँव विभिन्न दलों में बंटा हुआ दिखाई देता है। विभिन्न जाति, धर्म और दलों में बंटा हुआ समाज किसी भी अन्याय के विरुद्ध एक साथ अपनी आवाज तभी उठा सकते हैं, जब वे एकजुट हो जाएँ। इस दलबंदी में पूरे गाँव का एकजुट होना मुश्किल हो गया है।अकाल के समय नहर में पाइप डाला गया। पानी के दबाव से नहर कट गई। इस का मुकदमा ग्रामीणों पर किया गया। बाईस वर्षों तक मुकदमा चलता रहा। अन्याय के खिलाफ विरोध प्रकट करने के लिए जातियों में बंटा समाज एक नहीं हो पाता है। यह स्थिति किसानों को और कमजोर बनाती है। एक बेहतर जीवन के लिए उन्हेंइस संकुचित मानसिकता उबरना होगा नहीं, तो ''नहीं लड़ेंगे तो मरेगा, मर तो रहा ही है और जल्दी मरेगा। देश–दुनिया के नक्शे से गायब हो जायेगा। कोई रोक नहीं सकता। बहुत सारे मुद्दे हैं, जिनसे लड़ना जरूरी है। जैसे सरकारी नीतियां। गेहूँ पैदा करने में लागत बारह रुपया किलो आता है, लेकिन गेहूँ बिकता है सात रुपया किलो आलू और प्याज किसान के घर पैदा होता है तो दो रुपया किलो बिकने लगता है। दो महीने बाद जैसे किसान के घर से बाहर निकलता है, दस रुपया किलो हो जाता है। पिछले पैंतीस साल में जमीन सौ गुनी मँहगी हो गई। सोना पचहत्तर गुना, डीजल पचास गुना जबकि गेहूँ सिर्फ सात गुनासारीमंदी किसानों के लिए ही है।'' एक जुट होकर अब किसानों को अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाना होगा। बदलते समय के साथ वर्तमान के किसानों में जारुकता आई है। वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुए हैं। वे अपने अधिकार के लिए सवाल करते हैं। किन्तु बंटा हुआ समाज एकता की शक्ति को बनने ही नहीं देती है। जब वे इस एकता की शक्ति से जुड़ कर अपने अधिकारों के लिए सजग होंगे तो एक बेहतर स्थिति में पहुँच सकेंगे। पहलवान को उसके साथी किसानों का सहारा नहीं मिल पाता है, अतः वह अकेला पड़ जाता है।

आज भी गाँव में किसान के लिए न केवल आर्थिक समस्याएँ हैं, बल्कि सामाजिक संघर्ष बहुत अधिक है। पहलवान अपनी बेटी का विवाह करना चाहते हैं, किन्तु 'दहेज प्रथा' नामक सामाजिक विकृति उनके इस स्वप्न को यथार्थ नहीं बनने देती है।दहेज के सम्बन्ध में झुन्नू की पत्नी पहलवान से कहती है –"गुन–सहूर, रूप–रंग, कद–काठी, कुल–खानदान तो चाहिए ही चाहिए भइया। उसमें कैसी कोताही ! लेकिन इसके साथ–साथ यह भी देखा जाता है कि कैसी गोड़ी लेकर ड्योढ़ी में प्रवेस करती है। रुपए पैसे की लालच हमें एकदम नहीं है। भगवान ने बहुत दिया है लेकिन किसी रईस के घर से आएगी तो उसके साथ घर में रही सी आएगी। किसी दरिद्र के घर से आएगी, तो इस घर में भी उसके साथ– साथ दलिद्दर की पैसारी हो जाएगी।बस यही बचाना होगा। बाकी तो सारी बेटियाँ लक्ष्मी का अवतार होती है।" झुन्नू की माँ स्वयं स्त्री होकर विवाह के लिए दहेज की माँग करती है। भले ही उनके अपने द्वार पर उधार के दो बैल बंधे हैं, किन्तु उन बैलों को दिखाकर अपनी हैसियत बढ़ा चढ़ा कर दिखाना चाहती हैं और अधिक से अधिक दहेज वसूल लेना चाहती है। पूरा परिवार इसी फिराक में लगा रहता है। कमाऊ बेटे के लिए अधिक से अधिक धन दहेज में लेना ही उनका ध्येय बन गया है। समय आगे बढ़ा किन्तु दहेज

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

प्रथा रूपी दानव का अन्त नहीं हुआ। इसी दानव के चक्रव्यूह में फंसकर किसान लाचारी का बोध करता है।

पहलवान का बेटा प्रतिभावान है। उसने अपनी मेहनत और प्रतिभा से इंजीनियरिंग की शिक्षा के लिए प्रवेश परीक्षा में अच्छे अंक ला कर दाखिला पा लिया है। समाज में बेटे की इतनी तारीफ सुनकर पहलवान ने लोगों से कर्ज लेकर उसके शिक्षा की फीस का पहला किश्त तो भर दिया गया है, किन्तु आगे की फीस का इंतजाम कैसे हो ? "उनके जैसे चार एकड़ की जोत वाला किसान अगर साल की दोनों फसलों की कुल पैदावार बेच दे तो भी खाद, बीज, सिंचाई, मजदूरी खर्च घटाने के बाद भी कुछ हाथ लगेगा उससे एक साल की फीस का इंतजाम होना मुश्किल है। चार साल तक इस तरह की फीस भरिये। तब कहीं बेटा इंजीनियर कहलाने लायक होगा।" पहलवान बेटे के भविष्य और अपनी लाचारी में अपने उसूलों से भी समझौता करने के लिए तैयार हो जाते हैं। लेखक ने बड़ी निर्दयता से किसान की इस स्थिति का चित्रण कर पहलवान की दीनता की जीत उसके उसूलों पर दर्शाया है। जो पहलवान कभी इस बात के लिए तैयार नहीं था कि बछड़ें को कसाई के हाथों बेच दे वो आज अपनी आँखों के सामने कसाई के द्वारा बछड़े को खींच कर ले जाते हुए देख रहा है। एक किसान के लिए पशुधन अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। वह उसके लिए परिवार की तरह होता है। पहलवान की परिस्थितियों ने उसे किस स्थिति में पहुँचा दिया है। जितना लगाव किसान का पशुओं से होता है, उतना ही लगाव पशुओं को उनके मालिकों से होता है। इस स्थिति को लेखक ने बहुत खूबसूरती से दर्शाया है। "खूँटें से मुक्त होने की खुशी से बछड़ा चार छः कदम तो तेजी से चला लेकिन जब पीछे से गाय के होकड़ने की आवाज आयी, तो उसे कुछ गड़बड़ होने का अंदेशा हुआ। उसने पैर रोप दिए। खींचने पर एक कदम बढ़ाता फिर अड़ जाता।... पहले वह पेशाब के बहाने रुका फिर गोबर करने के बहाने।" यहाँ बछड़ें के मनोभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। पहलवान की भीषण लाचारी ने उसके मूल्यों को अपने बोझ से दबा दिया।

पहलवान संघर्षशील है। वो अपनी लाचारी में उलझते हैं और फिर कोशिश करते हैं उस उलझन को सुलझाने की। इसके लिए वो कई उपाय सोचते हैं। वे बेटी के विवाह और बेटे की फीस के लिए अपने बेटे के विवाह का रिश्ता मंजूर करना चाहते हैं और दहेज के पैसों से अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करना चाहते हैं। बेटा विवाह के लिए साफ मना कर देता है।

पहलवान को अपने वर्त्तमान की स्थितियों का ज्ञान है। वो अपने जीवन संघर्षों में तपे हैं। बछड़ें को तो उन्होंने बेच दिया किन्तु बेटे को बेचना उन्हें स्वीकार नहीं था। अब उन्होंने अपनी समस्याओं से डर कर नहीं लड़कर जीने की ठान ली है। वे जीवन के लिए छलाँग लगाते हैं। आखरी छलाँग जो लाचारी के भय, और मृत्यु के विरुद्ध है। "सूरज डूबने से पहले लाल हो रहा है। वे धोती की लांग खींचकर पीछे खोंसते हैं। चार–पांच बार बैठक लगाकर दोनों पैर झटकारते हैं। फिर दौड़ की लीक पर साथ–सत्तर फीट पीछे जाते हैं। दौड़ते हैं तो लगता है पैर दौड़ना भूल चुके हैं, लेकिन जल्दी ही रफ्तार पकड़ लेते हैं। उन्हें लगता है कि उनके साथ उनचासों पवनदौड़ पड़े हैं। मुंढे से हुमक कर हवा में छलाँग लगाते हैं, तो उन्हें लंका के लिए छलांग लगाते हनुमान जी याद आ जाते हैं। पी.सी.एस. देखता तो कहता जैसे जाल पड़ने पर मछलियाँ उछलती हैं. .. यह मौत के खिलाफ लगाई गई छलाँग है ।... आखिरी छलाँग।"

वर्तमान में बैलों का स्थान ट्रैक्टर ने लिया है। बहुत से किसानों के द्वारा से बैल अब नदारद है। जिसके पास अपना ट्रैक्टर है वह उसका इस्तेमाल करता है और जिसके पास नहीं है, वो किराया देकर ट्रैक्टर का प्रयोग करते हैं। खेती में नई तकनीक का प्रयोग होने लगा है, किन्तु एक सामान्य किसान के लिए अपनी खेती में तकनीक को शामिल करना एक बड़ी चुनौती है। इसके लिए आर्थिक सबलता आवश्यक है, जो कि सभी किसानों के लिए सुलभ नहीं होता है। इस स्थिति में किसान को सूदखोरों, बैंक आदि से कर्ज लेना पड़ता है। यह कर्ज की स्थिति कई बार उनके लिए गले का फाँस बन जाती है। इस उपन्यास के विषय में अजय तिवारी लिखते हैं – "आखिरी छलाँग' में उन्होंने जिन सामाजिक समस्याओं को, विशेषतः किसान जीवन की जिन परिस्थितियों को उठाया है, वे आज के भारत को विरासत में मिली हैं तथा नयी विकास नीतियों के कारण दिनोदिन उग्र होती जा रही हैं। कर्ज, दहेज, बाजारवाद, सरकारी नीतियाँ, इनमें से कोई एक समस्या नहीं, परस्पर उलझी हुई अनेक समस्याओं का जंजाल 'आखिरी छलाँग' का कथानक है। यही आज के भारतीय किसान की प्रतिनिधि वास्तविकता भी है।"

गाँव से युवा रोजगार के लिए शहर की ओर पलायन कर रहे हैं। खेती के लिए मजदूर मिलना कम हो गया है। ऐसी स्थिति में मशीन की जरूरत किसान को कर्ज लेने को बाध्य करती है। यह कर्ज देने वाले लोग कर्ज देकर किसानों को अपने जाल में फंसाकर उनसे अधिक लाभ लेना चाहते हैं। "इस दौर में बड़ी–बड़ी कंपनियों के मालिक ब्रह्म की तरह सर्वशक्तिमान और अदृश्य हैं। वे संबंधविहीन हैं। मनोविकारों से रहित वे मशीन और औजार हैं। वे कर्ज देने का मोहक जाल फैलाते हैं, विकास का, बेहतरीन स्वप्न दिखाते हैं और फांसकर किसान को इतना असहाय और लांछित कर देते हैं कि आत्महत्या के सिवाय उसके सामने और कोई रास्ता नहीं रहता।" वह कर्ज किसान के लिए गले का फाँस बन जाता है। प्राकृतिक आपदाएँ, उत्पादन पर सही मूल्य न मिलना आदि ऐसी समस्याएँ हैं, जिनसे किसान आज भी जूझ रहे हैं। किसान की आर्थिक स्थिति

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

को बेहतर करना अत्यंत आवश्यक कार्य है। वो भी आज के समय में जब महामारी ने मजदूरों को घर की ओर मुड़ने को बाध्य किया है। ऐसे में कृषि और किसान की स्थिति में सुधार होना अत्यंत आवश्यक है, जिससे रोजगार उत्पन्न हो सके और कृषि उत्पाद में भी वृद्धि हो सके। इस उपन्यास के मुख्य पात्र पहलवान अपनी उस स्थिति को जनता है जो कि इस सवाल से घिरा हुआ है–"सचमुच क्या है किसान की जिंदगी? एक कोना ढँकियें तो दूसरा उघार हो जाता है" किसानों के इस संघर्ष को शिवमूर्ति यथार्थ रूप में उसके सफेद–स्याह पक्षों के साथ प्रस्तुत करते हैं और इसके साथ ही किसानों के जीवन संघर्ष से जुड़े हुए महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रो. मैनेजर पांडेय, हिन्दी कथा–साहित्य प्रेमचन्द की कथा–परम्परा को भूला नहीं है (लेख), एकांत श्रीवास्तव, कुसुम खेमानी (संपादक), वागर्थ, अंक– जून 2014,पृष्ठ सं. –24.
2. विश्वनाथ त्रिपाठी, 'मरण फाँस से पार जाने की छलाँग' (लेख), मयंक खरे, सम्पादक, मंच अंक जनवरी– मार्च 2011,पृष्ठ सं. 30.
3. शिवमूर्ति, आखिरी छलाँग, नया ज्ञानोदय, संपादक– रवीन्द्र कालिया, अंक– जनवरी 2008, पृष्ठ सं.81.
4. शिवमूर्ति, सृजन का रसायन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, सं– 2014, पृष्ठ सं. –63.
5. शिवमूर्ति, आखिरी छलाँग, रविन्द्र कालिया (संपादक), नया ज्ञानोदय, अंक जनवरी 2008, पृष्ठ सं– 90.
6. शिवमूर्ति, आखिरी छलाँग, रविन्द्र कालिया (संपादक), नया ज्ञानोदय, अंक जनवरी 2008, पृष्ठ सं– 88.
7. शिवमूर्ति, आखिरी छलाँग, रविन्द्र कालिया (संपादक), नया ज्ञानोदय, अंक जनवरी 2008, पृष्ठ सं– 89.
8. शिवमूर्ति, आखिरी छलाँग, नया ज्ञानोदय, संपादक– रवीन्द्र कालिया, अंक जनवरी 2008, पृष्ठ सं.100.
9. वही,पृष्ठ–106.
10. अजय तिवारी, सकल करम करि थकेउं गोसाईं (लेख), नया ज्ञानोदय, रविन्द्र कालिया (संपादक), अंक जनवरी 2008, पृष्ठ सं.–113.
11. विश्वनाथ त्रिपाठी, 'मरण फाँस से पार जाने की छलाँग' (लेख), मयंक खरे, सम्पादक, मंच, अंक जनवरी– मार्च 2011, पृष्ठ सं. 31.
12. शिवमूर्ति, आखिरी छलाँग, रविन्द्र कालिया (संपादक), नया ज्ञानोदय, अंक जनवरी 2008, पृष्ठ सं– 90.

*****